51

परमेश्वर की महिमा हो!

(11:25-36)

रोमियों की पुस्तक की अपनी रूपरेखा पर चलते हुए हम ''व्यावहारिक'' के नीचे पहले भाग के अन्त ''व्याख्या'' वाले भाग के निकट पहुंच गए हैं। (इस पुस्तक के आगे रोमियों की पुस्तक पर रूपरेखा देखें।) रोमियों 11:25-36 में पौलुस ने अपनी चर्चा पूरी कर ली जिसे हम ''यहूदी समस्या'' कह रहे हैं (आयतें 25-32)। फिर वह अपने प्रभु के लिए महिमा करने लगा (आयतें 33-36)। हमारे पाठ का आधार आयत 36 से लिए शब्दों ''उसकी महिमा युगानुयग होती रहे'' के आधार पर लिया गया है।

इस प्रस्तुति के मुख्य विभाजन हमारे वचन पाठ के आरम्भिक शब्दों ''हे भाइयो, मैं नहीं चाहता कि तुम अनजान रहो ...'' (आयत 25ख) में मिलते हैं। NIV का अनुवाद है ''मैं तुम्हें अनभिज्ञ नहीं रहने देना चाहता।'' पौलुस ने कुछ सच्चाइयों की बात की जिन्हें हम उद्धार और परमेश्वर के बारे में जान सकते हैं। उसने कुछ बातों का उल्लेख किया जिन्हें हम *नहीं जान सकते*।

उ ार के विषय में जो हम जान सकते हैं (11:25-32)

परमेश्वर की एक योजना है (आयतें 25-27)

पहले तो हम यह जान सकते हैं कि परमेश्वर ने इस्राएलियों को बचाने के लिए एक योजना बनाई। हमारा वचन पाठ आरम्भ होता है:

> हे भाइयो, कहीं ऐसा न हो, कि तुम अपने आप को बुद्धिमान समझ लो; इसलिए मैं नहीं चाहता कि तुम इस भेद से अनजान रहो, कि जब तक अन्यजातियां पूरी रीति से प्रवेश न कर लें, तब तक इस्राएल का एक भाग ऐसा ही कठोर रहेगा। और इस रीति से सारा इस्राएल उद्धार पाएगा (आयतें 25, 26क)।

जैसा कि '' 'सारा इस्राएल उद्धार पाएगा'? (11:25, 26क)'' में ''भेद'' उसे कहा गया है जो कालांतर में पता नहीं था पर अब परमेश्वर द्वारा प्रकट कर दिया गया है। हमारे वचन पाठ के बारे में अद्‌भुत ''भेद'' (प्रकाशन) का कुछ भाग परमेश्वर द्वारा यहूदियों को विश्वास करने के लिए उकसाने हेतु अन्यजातियों को ग्रहण करने की योजना था:

> ... जब तक अन्यजातियां पूरी रीति से प्रवेश न कर लें [जब तक अन्यजातियां परमेश्वर की इच्छा को पूरा करके परमेश्वर द्वारा स्वीकार नहीं कर ली जाती], तब तक इस्राएल का एक भाग ऐसा ही कठोर [परमेश्वर द्वारा ठुकराए जाने के कारण] रहेगा। और इस रीति से [इस तरह] सारा [सांसारिक] इस्राएल उद्धार पाएगा [अन्यजातियों को ग्रहण करके उन्हें जलन

दिलाकर]; ... (आयतें 25, 26क)।

जैसा कि पौलुस आम तौर पर करता था उसने अपने दावे की पुष्टि के लिए पवित्र शास्त्र का इस्तेमाल किया: जैसा कि लिखा है, छुड़ाने वाला सिय्योन से आएगा और अभक्ति को सिय्योन से दूर करेगा। और उन के साथ मेरी यही वाचा होगी, जब कि मैं उन के पापों को दूर कर दूंगा (आयतें 26ख, 27)। यह उद्धरण पुराने नियम की आयतों का मिश्रण है। मुख्य हवाला यशायाह 59:20, 21 है, उस आयत में यशायाह ने इस्राएल की बहाली की पूर्व सूचना दी थी। पौलुस ने इन शब्दों को यीशु पर लागू किया, जिसने यहूदियों को परमेश्वर की ओर वापस आने का माध्यम देना था। यशायाह 27 से भी एक पंक्ति हो सकती है और ''नई वाचा'' की यिर्मयाह की प्रतिज्ञा हमें समापन को स्मरण कराती है। रोमियों की पुस्तक की इन आयतों की तुलना पुराने नियम की आयतों से करें।

रोमियों 11:26ख, 27	पुराना नियम
''छुड़ाने वाला सिय्योन [यरूशलेम] से आएगा।''	''सिय्योन में एक छुड़ाने वाला आएगा'' (यशायाह 59:20क)।
''वह अभक्ति को याकूब [इस्राएल] से दूर करेगा''	''याकूब के अधर्म का प्रायश्चित किया जाएगा'' (यशायाह 27:9क)।
''उनके साथ मेरी यही वाचा है।''	''... जो वाचा मैंने उन से बांधी है वह यह है'' (यशायाह 59:21क)।
''जब कि मैं उनके पापों को दूर कर दूंगा।''	''... मैं उनका अधर्म क्षमा करूंगा, और पाप फिर स्मरण न करूंगा'' (यिर्मयाह 31:31-34)।

पुराने नियम के हवालों और पौलुस के उद्धरण में जाए जाने वाले अधिक स्पष्ट अन्तरों में से एक यह है कि यशायाह ने कहा कि ''छुड़ाने वाला सिय्योन *में* आएगा'' जबकि पौलुस ने कहा कि ''छुड़ाने वाला सिय्योन *से* आएगा।'' हम यह पक्का नहीं कह सकते कि पौलुस ने (परमेश्वर की प्रेरणा से) इन शब्दों को क्यों बदला। शायद वह फिर से अन्यजातियों को याद दिला रहा था कि उनका उद्धार करने वाला *यहूदियों में से* था। सम्भवतया यशायाह की भविष्यवाणी से प्रभावित था कि ''यहोवा का वचन [सुसमाचार यरूशलेम *से*] निकलेगा'' (यशायाह 2:3; लूका 24:47; भी देखें)।

जो लोग यह सोचते हैं कि रोमियों 11:25-26 युग के अन्त की घटनाओं की बात करती हैं वे यह मानते हैं कि नये नियम का पौलुस का उदाहरण यीशु के *द्वितीय* आगमन से जुड़ा हुआ है। इस व्याख्या को नकारने के कई कारण हैं। (1) जैसा कि जॉन आर. डब्ल्यू. स्कॉर्ट ने ध्यान दिलाया है, ''यह [आयत] यशायाह की मूल पुस्तक के *पहले* आगमन के सम्बन्ध में थी।''[1] (2) मसीह के *पहले* आगमन का एक यह उद्देश्य ''याकूब [इस्राएल] से अभक्ति'' दूर करने की कोशिश से था (देखें मत्ती 15:24)। ''उनके पाप मिटाने'' के लिए अर्थात खोए हुओं के

उद्धार के लिए था (देखें लूका 19:10)। यीशु जब *दूसरी* बार आएगा तो यह पाप मिटाने के लिए नहीं बल्कि न्याय करने के लिए होगा (देखें मत्ती 25:31–33)। (3) रोमियों 11:26, 27 को "नई वाचा" की यिर्मयाह की प्रतिज्ञा से अलग करना कठिन होगा, पर वह नई वाचा (यीशु का नया नियम) पहले ही स्थापित हो चुका है (देखें इब्रानियों 8:8–12)। इसलिए मैं यह निष्कर्ष निकालता हूं कि रोमियों 11:26, 27 का सम्बन्ध यीशु के *पहले* आगमन से है जब वह देहधारी हुआ (यूहन्ना 1:14), न कि उसके *द्वितीय* के आगमन से।

26 और 27 आयतों के उद्धरण का मुख्य प्वायंट यह दिखाना था कि भविष्यवक्ताओं ने पूर्व सूचना दे दी थी कि छुड़ाने वाला (मसीह) इस्राएल के उद्धार के लिए (उन्हें परमेश्वर की योजनाओं और उद्देश्यों में वापस लाने के लिए) आएगा। ऐसा यहूदियों द्वारा अन्यजातियों को परमेश्वर द्वारा स्वीकार किए जाने की जलन से होना था। परमेश्वर के पास यहूदियों के उद्धार के लिए एक योजना थी (और है), यानी यीशु पर केन्द्रित योजना।

परमेश्वर यहूदियों का उद्धार चाहता है (आयतें 28, 29)

दूसरा, उद्धार के विषय में हम जान सकते हैं कि परमेश्वर आज भी *चाहता है* यहूदी उद्धार पाएं। 28 और 29 आयतों में पौलुस ने कहा, "वे [यहूदी] सुसमाचार के भाव से तो तुम्हारे [अन्यजातियों के] बैरी हैं, परन्तु चुन लिए जाने के भाव [यहूदी] से बापदादों के प्यारे हैं। क्योंकि परमेश्वर अपने बरदानों से, और बुलाहट से कभी पीछे नहीं हटता" (आयतें 28, 29)। एक दृष्टिकोण से यहूदी "वैरी" थे, जबकि एक और दृष्टिकोण से वे "प्यारे" थे।

जो लोग यह मानते हैं कि सांसारिक यहूदी आज भी "परमेश्वर के चुने हुए लोग" हैं। उनका मानना है कि ये दो आयतें उनकी स्थिति की पुष्टि करती हैं। परन्तु हमने पहले यह साबित किया था कि शारीरिक इस्राएली परमेश्वर के चुने हुए लोगों में से नहीं हैं। (परमेश्वर और इस्राएल पाठ फिर से देखें।) "इस्राएल के लिए कोई भी जातीय आशीष खत्म हो चुकी है।"[2] ऐसा होने पर क्या पौलुस 28 और 29 आयतों में किसकी बात कर रहा *था*? मेरा मानना है कि वह यह समझा रहा था कि परमेश्वर ने यहूदियों को मन फिराकर उसके पास वापस आने का और अवसर देना था।

आयत 28 आरम्भ होती है, "वे [यहूदी] सुसमाचार के भाव से तो तुम्हारे बैरी हैं।" यहूदी अगुओं की अगुआई में यहूदियों की भीड़ ने यीशु को क्रूस पर चढ़ा दिया था। कलीसिया की स्थापना के बाद, कुछ यहूदियों ने बुरी तरह से यीशु की कहानी सुनाई जाने का विरोध किया था (उदाहरण के लिए प्रेरितों 17:5, 13)। यदि उनमें से कुछ को उनकी मर्जी करने दी जाती, तो सुसमाचार का हर प्रचारक खामोश कर दिया गया होता और सुसमाचार सुनने का अवसर किसी को न मिलता। "सुसमाचार के भाव से" यहूदी सचमुच "बैरी" थे।

पौलुस ने आगे कहा, "तुम्हारे [अन्यजातियों] के लिए" (आयत 28ख)। यह अध्याय 11 में कई बार बताए तथ्य की पुष्टि है कि यहूदियों के सुसमाचार को ठुकराने से अन्यजातियों के लिए सुसमाचार को सुनने और उद्धार पाने का अवसर मिल गया।

इस तथ्य से कि यहूदी लोग सुसमाचार के वैरी थे इसलिए जिन्हें सुसमाचार दिया गया था क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है? आयत 28 के पहले भाग को इस प्रकार विस्तार दिया जा सकता है: "सुसमाचार के दृष्टिकोण से वे शत्रु हैं [और केवल दण्ड के योग्य हैं]।"

यीशु की हत्या करके और कलीसिया, सुसमाचार तथा मसीही लोगों को नष्ट करने के यहूदियों के प्रयास पर विचार करें, तो परमेश्वर ने उन्हें पृथ्वी पर से मिटा क्यों नहीं डाला? यह हमें आयत 28 के अन्तिम भाग तक ले आता है: ''परन्तु चुन लिए जाने के भाव से बापदादों की खातिर परमेश्वर के प्यारे हैं।'' ''परमेश्वर के प्यारे'' इस्राएल को परमेश्वर द्वारा वह जाति होने के लिए चुना जाने को कहा गया है जिसके द्वारा उसने अपनी योजनाओं को अंजाम देना था। क्या इस्राएल ''प्यारा'' था क्योंकि इसके लोग प्यारे थे इसलिए क्योंकि उन्होंने परमेश्वर के लिए प्रेम दिखाया था? नहीं, बल्कि इस्राएल ''बाप-दादों की खातिर प्यारा'' था। ''बापदादों'' पुरखाओं को (देखें NIV) कहा गया है, विशेषकर अब्राहम को (देखें रोमियों 4) जो परमेश्वर का मित्र था (याकूब 2:23; देखें 2 इतिहास 20:7; यशायाह 41:8)। परमेश्वर ने अब्राहम से कुछ प्रतिज्ञाएं की थीं और वह अपने वचन से मुकरा नहीं था-''क्योंकि परमेश्वर अपने बरदानों से, और बुलाहट से कभी पीछे नहीं हटता'' (रोमियों 11:29; देखें गिनती 23:19)। ''कभी पीछे नहीं हटता'' का अनुवाद एक अलफा (*a*) से नकारात्मक में बने ''मन फिराव'' के लिए यूनानी शब्द से किया गया है (देखें KJV)। ''मन फिराव'' का मूल अर्थ ''मन को बदलना'' है। परमेश्वर ने अब्राहम से की गई प्रतिज्ञाओं को पूरा करने के बारे में अपने मन को इतनी बात से नहीं बदला कि अब्राहम के वंशज़ वे नहीं थे जो उन्हें होना चाहिए था। जैसा कि हमारे अध्ययन में पहले बताया गया है, परमेश्वर ने यहूदियों से की गई अपनी हर प्रतिज्ञा को पूरा किया।

मैंने सुझाव दिया कि आयत 28 के पहले भाग को इस प्रकार विस्तार दिया जा सकता है: ''सुसमाचार के दृष्टिकोण से वे [यहूदी] शत्रु हैं [और केवल दण्ड के योग्य हैं]'' आयत 28 के पिछले भाग को इस प्रकार विस्तार दिया जा सकता है: ''परन्तु परमेश्वर की पसन्द के दृष्टिकोण से वे बाप दादों की खातिर [यहूदी] प्रिय हैं [जिस कारण परमेश्वर उन्हें सुसमाचार को सुनने और मानने का एक और अवसर दे रहा है]।'' उन घृणित कामों के बावजूद जो उन्होंने किए थे परमेश्वर आज भी यहूदियों का उद्धार चाहता था।

परमेश्वर दया दिखाना चाहता है (आयतें 30-32)

तीसरा, उद्धार के विषय में हम जानते हैं कि परमेश्वर दया दिखाना चाहता है। ''दया'' अध्याय 9 से 11 में एक मुख्य शब्द है (देखें 9:15, 16, 18, 23)। 11:30-32 में यह शब्द चार बार मिलता है। ''दया'' (*eleos*) का निकट सम्बन्ध ''अनुग्रह'' (*charis*) से है और इन दोनों में अन्तर करना कठिन है। डेल हार्टमैन को यह कहना पसन्द है कि ''अनुग्रह'' परमेश्वर का हमें वह *नहीं* देना है जिसके हम योग्य हैं (दण्ड) जबकि ''दया'' परमेश्वर का हमें वह देना है जिसके हम योग्य (नहीं) हैं (आशिषें)। किसी और ने लिखा है कि ''दया'' परमेश्वर के प्रेम का वह पहलू है जो उससे दयनीय की सहायता करवाता है, बिल्कुल वैसे ही जैसे ''अनुग्रह उसके प्रेम का वह पहलू है जो उसे दोषी को क्षमा करने के लिए प्रेरित करता है।''[3] ''दया'' की सरल परिभाषा है ''*व्यक्त किया गया* अनुग्रह।'' आप ''दया'' की परिभाषा जैसे भी करें, वचन घोषणा करता है कि परमेश्वर ''*सब पर* दया'' करना चाहता है (आयत 32), यहूदी हों या अन्यजाति और चाहे हम!

परमेश्वर के सब पर दया दिखाने की बात करने से पहले पौलुस ने (अन्तिम बार) उस क्रम

को दोहराया जिससे अब हम परिचित हैं। यहूदियों के ठुकराए जाने (परमेश्वर द्वारा) से अन्यजातियों को ग्रहण किए जाने (परमेश्वर द्वारा) का अवसर मिला। यह यहूदियों में अन्यजाति मसीही लोगों को मिलने वाली आत्मिक आशिषें पाने की सच्चे मन से इच्छा जगाने के उद्देश्य से था। बदले में उन्होंने सुसमाचार की बात माननी थी और परमेश्वर द्वारा ग्रहण किया जाना था। 30 और 31 आयतों में पौलुस ने इसे इस प्रकार से क्रमबद्ध किया है:

> क्योंकि जैसे तुम [अन्यजातियों] ने पहिले परमेश्वर की आज्ञा न मानी परन्तु अभी उन [यहूदियों] के आज्ञा न मानने से तुम पर दया हुई।[4] वैसे ही उन्होंने [यहूदियों ने] भी अब आज्ञा न मानी कि तुम [अन्यजातियों] पर जो दया होती है इस से उन [यहूदियों] पर भी दया हो।

पौलुस की मुख्य विचार रेखा को इन दोनों आयतों में आसानी से देखा जा सकता है:

यहूदियों का आज्ञा न मानना
(परमेश्वर द्वारा यहूदियों को ठुकराए जाने का कारण)

↓

अन्यजातियों पर दया दिखाया जाना
(परमेश्वर द्वारा अन्यजातियों को ग्रहण किया जाना)

↓

यहूदियों पर दया दिखाया जाना
(परमेश्वर द्वारा यहूदियों को ग्रहण किया जाना)

पौलुस ने अपनी चर्चा के इस भाग को यह कहते हुए समाप्त किया, ''क्योंकि परमेश्वर ने सब को आज्ञा न मानने के कारण बन्द कर रखा ताकि वह सब पर दया करे'' (आयत 32)। ''बन्द कर रखा'' यूनानी भाषा में *sugkleio* (*sun* ([के साथ ''इकट्ठे''] से पहले *kleio* [''बन्द करना''] यूनानी में) है। मेकोर्ड ने इस आयत का अनुवाद किया, ''परमेश्वर ने हर किसी को अवज्ञा में कैदी बना दिया है।...'' यह ऐसा कुछ नहीं है जो परमेश्वर ने मनमानी से हमारे लिए किया हो बल्कि यह तो हमारे अपने पापपूर्ण होने का परिणाम है। अपने पाप के कारण, हम सबको पाप द्वारा बन्दी बना लिया गया था। ''स्थिति निराशाजनक है क्योंकि पाप परेशान करता है, व्यवस्था दोषी ठहराती है, विवेक डराता है, अन्तिम न्याय धमकाता है।... [परन्तु फिर], अचानक अंधेरा छितर जाता है। स्वयं परमेश्वर आकर जेल का फाटक खोल देता है और भीतर प्रकाश आने [देता] है।''[5] हम सभी आज्ञा न मानने वाले रहे हैं, इसलिए हम में से किसी का भी उद्धार यदि हो सकता है तो वह परमेयवर के अनुग्रह के कारण ही है।

कइयों ने विश्वव्यापी उद्धार की शिक्षा देने के लिए आयत 32 का इस्तेमाल किया है। वे कहते हैं, ''यह सच है कि हर कोई आज्ञा तोड़ने वाला है, परन्तु यह आयत सिखाती है कि अन्त में परमेश्वर सब पर अपनी दया दिखाएगा।'' इस झूठी शिक्षा के बारे में स्टॉर्ट ने लिखा है:

इस आयत पर कुछ लोगों ने अपने वैश्विक स्वप्न बना लिए हैं। और रोमियों की पुस्तक में अपने संदर्भ से अलग इसे अन्त में सारे संसार के उद्धार की प्रतिज्ञा समझा जा सकता है। परन्तु रोमियों की पुस्तक इस व्याख्या की अनुमति नहीं देगी, क्योंकि इसमें पौलुस घोषणा करता है कि ''परमेश्वर के क्रोध का दिन'' (2:5) आएगा जिसमें कुछ लोगों को ''क्रोध और कोप,'' ''परेशानी और निराशा'' मिलेगी (2:8) से।[6]

आयत 32 में पौलुस का संदेश है कि चाहे हम सब आज्ञा न मानने वाले और केवल दण्ड के अधिकारी हैं, तौभी परमेश्वर हम पर दया दिखाना चाहता है। वह हम *सब पर* चाहे यहूदी हों या अन्यजाति, जवान हों या बूढ़े, नर हों या नारी, धनवान हों या निर्धन, पढ़े लिखे हों या अनपढ़, ''भले हों या बुरे'' (जैसा संसार मानता है) पर दया दिखाना चाहता है। परमेश्वर हम *पर* यानी आप पर और मुझ पर दया दिखाना चाहता है। इसलिए परमेश्वर को धन्यवाद दें!

परमेश्वर के बारे में जो हम जान सकते हैं (11:33-36)

इस्राएल के छुटकारे और सब पर दया दिखाने की उसकी इच्छा के लिए परमेश्वर की योजना पर विचार करते हुए पौलुस अचानक स्तुति करने लगा। हमने कहा था कि अध्याय 9 से 11 का फोकस ''यहूदी समस्या'' पर है; एक गहरे अर्थ में यह भाग इस्राएल के बारे में नहीं बल्कि परमेश्वर के बारे में है।[7] यह इस बारे में है कि परमेश्वर पर भरोसा किया जा सकता है या नहीं, परमेश्वर ने अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा किया है या नहीं (देखें 9:6)। परमेश्वर की विश्वासयोग्यता की पुष्टि करने के बाद पौलुस ने इस भाग को कि परमेश्वर कितना अद्‌भुत है की अभिव्यक्ति के साथ समाप्त किया। रोमियों 11:33–36 अध्याय 11 का, अध्याय 9 से 11 का और यहां तक पौलुस की हर बात का सही चरण है।

33 से 36 आयतों को ऊंचे स्वर में कई बार पढ़ें। यह वह वचन है जिसका स्वाद उसके विश्लेषण से अधिक बार लिया जाना चाहिए। इस वचन में पौलुस की शब्दावली को ध्यान से देखें। इस वचन में प्रेरित ने परमेश्वर के विषय में कई बातें कही हैं।

हम परमेश्वर की हर बात को नहीं जान सकते (आयतें 33, 34)

अध्याय 11 में पौलुस ने अपने पाठकों को परमेश्वर के मन और ढंगों की एक विरल झलक दी कि परमेश्वर ने कैसे अन्यजातियों को उद्धार का अवसर देने के लिए यहूदियों के आज्ञा न मानने का इस्तेमाल किया और फिर किस प्रकार उसने अन्यजातियों के आज्ञा मानने को यहूदियों को आज्ञा मानने के लिए उकसाने के लिए इस्तेमाल किया। पौलुस ने परमेश्वर की अद्‌भुत बुद्धि की प्रशंसा के साथ स्तुति आरम्भ की: ''आहा! परमेश्वर का धन और बुद्धि और ज्ञान[8] क्या ही गंभीर है'' (आयत 33क)। कई लोगों में ज्ञान होता है परन्तु बुद्धि की कमी होती है; अन्यों में बुद्धि होती है परन्तु उन्हें ज्ञान की घटी होती है। परमेश्वर के पास दोनों हैं!

आयत 33 के पहले भाग का मुख्य शब्द ''गम्भीर'' (*bathos*) है। परमेश्वर की बुद्धि और ज्ञान इतने ''गम्भीर'' या गहरे हैं कि हम उन्हें समझना तो दूर समझने का आरम्भ भी नहीं कर सकते। पौलुस ने आगे कहा, ''उसके विचार कैसे अथाह, और उसके मार्ग कैसे अगम हैं!'' (आयत 33ख)। JB के संस्करण में है ''... उसके लक्ष्यों को भेद पाना या उसके ढंगों को समझना

कितना असम्भव है।'' मुझे यशायाह 55:8, 9 का स्मरण आता है: ''क्योंकि यहोवा कहता है, मेरे विचार और तुम्हारे विचार एक समान नहीं हैं, न तुम्हारी गति और मेरी गति एक सी है। क्योंकि मेरी और तुम्हारी गति में और मेरे और तुम्हारे सोच विचारों में, आकाश और पृथ्वी का अन्तर है।''

पौलुस ने अपनी बात को बढ़ाने के लिए पुराने नियम से उद्धृत किया, परन्तु उसके उद्धरण में कई वचनों से बातें ली गई हैं (देखें याकूब 15:8; यशायाह 40:13; यिर्मयाह 23:18)। उसने कहा, ''प्रभु की बुद्धि को किस ने जाना? या उसका मंत्री कौन हुआ?'' (रोमियों 11:34)। ''मंत्री'' शब्द *sumboulos* (*boule* [''सलाह, परामर्श देना''] के साथ *sun* [''इकट्ठे, के साथ'']) लिया गया है। मैकॉर्ड के अनुवाद में ''सलाहकार'' है। परमेश्वर ने कब किसी से सलाह मांगी? आयत 34 के दोनों प्रश्नों का उत्तर है ''कोई नहीं!''

एक अर्थ में पौलुस ने कहा कि पहला तथ्य जो हम परमेश्वर के बारे में जान सकते हैं वह यह है कि हम परमेश्वर की हर बात को नहीं जान सकते। जैसे कटोरे में समुद्र नहीं समा सकता, वैसे ही हमारे सीमित मनों में परमेश्वर की असीमित बुद्धि और ज्ञान को नहीं डाला जा सकता। इस सच्चाई से उन लोगों को दीन हो जाना चाहिए जो परमेश्वर के बनाये हुए संसार को समझने का प्रयास कर रहे हैं। इस अवधारणा से उन लोगों को भी विनम्र हो जाना चाहिए जो उस वचन को समझने की कोशिश में हैं जो उसने हमें दिया है। जितना हम जानते हैं, उतना ही हमें पता चलता है कि हमें कितना कम ज्ञान है। किसी ने कहा है, ''जैसे ज्ञान का टापू बढ़ता है, वैसे ही अज्ञानता का किनारा भी।''

लियोन मौरिस का अवलोकन है कि ''पौलुस की स्तुति उससे प्रेरित थी जो हम परमेश्वर के विषय में *नहीं* जानते ... बजाय उसके जो हम *जानते* हैं।''[9] पौलुस के पास हर जवाब नहीं था। उनकी ''व्याख्याएं'' से उतने ही प्रश्न खड़े हुए हैं जितने उनके उत्तर दिए गए हैं। अन्त में इन जीवन के प्रश्नों का एकमात्र संतोषजनक ''उत्तर'' सबसे बुद्धिमान, सबसे ज्ञानी, सबसे दयालु परमेश्वर में भरोसा रखना है। हम अपने परमेश्वर को कर्ज में नहीं रख सकते।

हम परमेश्वर को अपना कर्ज़दार नहीं मान सकते (आयत 35)

परमेश्वर का दूसरा तथ्य जो हम जान सकते हैं कि हम उसे कभी अपना कर्ज़दार नहीं बना सकते। आयत 35 में पौलुस ने अय्यूब का सार दिया: ''या किस ने पहिले उसे कुछ दिया है जिसका बदला उसे दिया जाए?'' फिर से समझ आया उत्तर है ''कोई नहीं।'' हम परमेश्वर को नहीं दे सकते क्योंकि जो कुछ हमारे पास है वह उसी से मिला है और आज भी उसी का है; हम तो केवल भण्डारी हैं। जब राजा दाऊद ने मन्दिर के भवन में इस्तेमाल के लिए भेंट दी थी, तो उसने परमेश्वर से प्रार्थना की, ''मैं क्या हूँ? और मेरी प्रजा क्या है? कि हम को इस रीति से अपनी इच्छा से तुझे भेंट देने की शक्ति मिले? तुझी से तो सब कुछ मिलता है, और हम ने तेरे हाथ से पाकर तुझे दिया है'' (1 इतिहास 29:14; KJV)।

शारीरिक बातों में तो हम परमेश्वर को कर्ज़दार नहीं बना सकते, आत्मिक बातों में ये बात उससे भी दोगुनी सही है। परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करना बहुत आवश्यक है बल्कि हमारे उद्धार के लिए अनिवार्य है। फिर भी हमें इस बात की समझ होनी आवश्यक है कि हमारा आज्ञा मानना परमेश्वर को किसी प्रकार हमारा कर्ज़दार नहीं बनाता। जब तक हमारा उद्धार अनुग्रह से

न हो, तब तक हमारा उद्धार वास्तव में हुआ ही नहीं।

हमारा परमेश्वर अद्‌भुत है (आयत 36)

अन्त में हम जान सकते हैं कि परमेश्वर कहने से बाहर अद्‌भुत है। पौलुस ने कहा, ''क्योंकि उसी की ओर से और उसी के द्वारा, और उसी के लिए सब कुछ है'' (आयत 36क)। भौतिक सृष्टि के लिए यह बात सच है। गुड स्पीट के संस्करण में ''क्योंकि सब कुछ उसी से आता है; सब कुछ उसी के द्वारा अस्तित्व में है; और उसी में सब कुछ समाप्त हो जाता है।'' मौरिस ने लिखा है कि ''सारी सृष्टि का जनक, सम्भालने वाला और लक्ष्य'' परमेश्वर ही है।[10] परन्तु यह शब्दावली शारीरिक तक ही सीमित नहीं हो सकती क्योंकि संदर्भ आत्मिक मामलों की बात करता है। हमारा छुटकारा ''उससे और उसके द्वारा और उसके लिए'' ही है। वह हमारे उद्धार का स्रोत, सामर्थ और यथार्थ है।

इस सब को ध्यान में रखते हुए, पौलुस ने निष्कर्ष निकाला, ''*उस* की महिमा युगानुयुग होती रहे'' (आयत 36ख)। हमें चाहिए कि हम परमेश्वर को दी जाने वाली महिमा को कभी न भूलें। ''यहोवा मेरा बल और भजन का विषय है, और वही मेरा उद्धार भी ठहरा है; मेरा ईश्वर वही है, मैं उसी की स्तुति करूंगा'' (निर्गमन 15:2क)। ''आमीन'' (रोमियों 11:36ग)!

इस प्रकार रोमियों की पुस्तक का यह कठिन भाग समाप्त होता है (अध्याय 9 से 11)। पौलुस ने चर्चा किए गए सभी घबरा देने वाले प्रश्नों के आसान उत्तर नहीं दिए, परन्तु न ही उसने संकेत दिया कि ये प्रश्न महत्वहीन हैं। इसके बजाय उसने हमें कुछ समझ दी और फिर एक अर्थ में कहा कि ''*परमेश्वर* के पास सब उत्तर हैं। *उस* में भरोसा रखो।'' यह भाग विश्वास की एक बात से खत्म होता है।

सारांश

इस प्रस्तुति पर काम करते हुए मुझे व्यवस्थाविवरण 29:29 का ध्यान आया: ''गुप्त बातें हमारे परमेश्वर यहोवा के वश में हैं; परन्तु जो प्रगट की गई हैं वे सदा के लिये हमारे और हमारे वंश में रहेंगी, इसलिये कि इस व्यवस्था की सब बातें पूरी ही जाएं।'' ऐसी कई बातें हैं जिन्हें हम नहीं जान सकते: ''गुप्त बातें हमारे परमेश्वर यहोवा के वश में हैं।'' परन्तु परमेश्वर ने कुछ सच्चाइयां हम पर प्रगट करना उचित समझा है। अपने पाठ में हमने ''प्रगट की गई बातों'' को देखा है:

- यहूदियों और अन्यजातियों दोनों के उद्धार के लिए परमेश्वर के पास योजना है।
- परमेश्वर चाहता है कि सबका उद्धार हो।
- परमेश्वर सब पर दया दिखाना चाहता है।
- हम परमेश्वर को कभी कर्ज़ में नहीं डाल सकते। हमें उसके अनुग्रह और दया पर निर्भर रहना चाहिए।
- हमारा परमेश्वर कहने से बाहर अद्‌भुत है।

ये सच्चाई इसलिए नहीं प्रकट की गईं थी कि मैं *ट्रुथ फ़ॉर टुडे*[11] के कई कागज़ भर सकता। बल्कि इसलिए प्रगट की गई थी कि हमें मसीह की नई वाचा की ''सब बातों को मानने'' के लिए प्रेरणा मिले!

प्रचारकों तथा सिखाने वालों के लिए नोट्स

जब आप इस प्रवचन का इस्तेमाल करें तो अपने सुनने वालों को बताएं कि यीशु की ''सब बातें मानने'' जिसमें उद्धार के विषय में उसकी बातें भी हैं, क्या आवश्यक है (यूहन्ना 3:16; लूका 13:3; मत्ती 10:32; मरकुस 16:16)।

इस पाठ के लिए एक और सम्भावित शीर्षक है ''उम्मीद हमेशा रहती है!'' दो बिन्दु बनाए जा सकते हैं: (1) उम्मीद है क्योंकि परमेश्वर चाहता है कि आपका उद्धार हो (आयतें 25-32) और, (2) उम्मीद है क्योंकि परमेश्वर परमेश्वर है (आयतें 33-36)।

आप पौलुस की शानदार स्तुति को विस्तार दे सकते हैं (आयतें 33-36)। इसके साथ गाने के लिए उपयुक्त गीत ''मैं भय के साथ खड़ा हूं'' होगा। आप ''क्योंकि उस की ओर से, और उसी के द्वारा, और उसी के लिए सब कुछ हैं'' शब्दों पर टैक्चुअल सरमन दे सकते हैं (आयत 36क)।

टिप्पणियां

[1]जॉन आर. डब्ल्यू. स्टॉट, *दि लैटर्स ऑफ़ जॉन: ऐन इंट्रोडक्शन एण्ड कमैंट्री* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1988), 304. [2]डग्लस जे. मू, *रोमन्स,* दि NIV एप्लीकेशन कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: जौंडरवन पब्लिशिंग हाउस, 2000), 385. [3]रोनल्ड एफ़. यंगब्लड, संपा., *नेल्सन'स न्यू इलस्ट्रेटिड बाइबल डिक्शनरी* (नैशविल्ले: नेल्सन, 1995), 822. [4]30 और 31 आयतों में, KJV में ''विश्वास किया'' और ''अविश्वास'' शब्दों का इस्तेमाल हुआ है, परन्तु यूनानी धर्मशास्त्र में आज्ञा न मानना के लिए शब्द है। रोमियों 11 में पहले पौलुस ने ज़ोर दिया था कि यहूदियों को *अविश्वास* के कारण परमेश्वर की आशिषों से निकाला गया था (देखें आयत 20)। यहां प्रेरित ने कहा कि यहां उनकी *आज्ञा न मानने* के कारण हैं। एक बार फिर पौलुस ने विश्वास और आज्ञा मानने की अवधारणाओं का इस्तेमाल अदल बदल कर किया। [5]विलियम हैंड्रिक्सन, एक्सपोजिशन ऑफ़ पॉल'स *एपिस्टल टू द रोमन्स* न्यू टैस्टामेंट कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1982) 385. [6]स्टॉट, 307. [7]मू, 291. [8]''बुद्धि'' और ''ज्ञान'' के बीच के बारे में कई शब्द लिखे गए हैं। यह सोचने पर कि ''ज्ञान'' का सम्बन्ध तथ्यों को जानने जबकि ''बुद्धि'' का सम्बन्ध ''सामान्य ज्ञान'' के साथ अधिक है, आसान है। [9]लियोन मौरिस, *दि एपिस्टल टू द रोमन्स* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1988), 427. [10]वही, 429.

[11]क्लास या अराधना सेवा में मैं कह सकता हूं, ''ताकि मेरे पास कुछ ऐसा हो जिससे मेरा पाठ कुछ मिनटों तक के लिए बन जाए।''